مارچ ۲۰۱۴ء

ماہنامہ شعاع عمل لکھنؤ

قَالَ اللّٰهُ تَبَارَکَ وَتَعَالیٰ قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَ کِتَابٌ مُبِیْنٌ

بے شک تمہارے پاس اللہ کی طرف سے نور آیا ہے اور روشن کتاب



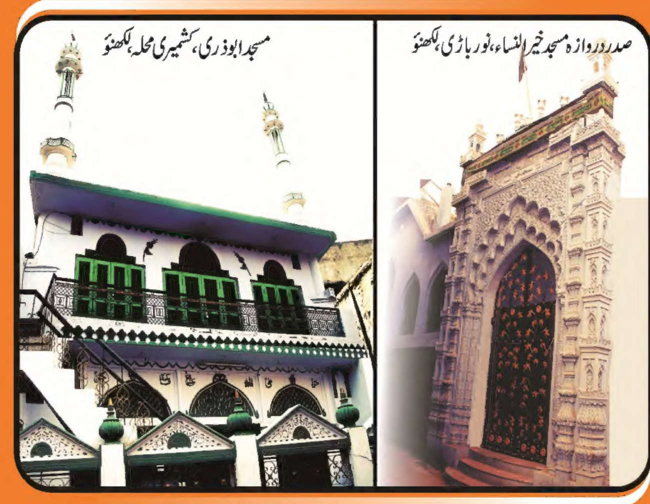
نور ہدایت فاؤنڈیشن، حسینیہ غفرانمآبؒ، چوک، لکھنؤ-۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd. No. SSP/LW/NP-75/2014-16 Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

SHUA-E-AMAL
Lucknow

शुआ-ए-अमल
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ

March 2014



مسجد ابوذری، کشمیری محلہ، لکھنؤ

صدر دروازہ مسجد خیر النساء، نور باڑی، لکھنؤ



NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION
Imambara Ghufran Maab, Chowk, Lucknow-3 (U.P.) INDIA, Ph.:0522-2252230

बिस्मेही तआला

वर्ष 10 — अंक 9

न्यास संस्थापन

15 जमादिलऊला 1424 हि० / 16 जुलाई 2003 ई०

पत्रिका विमोचन

15 जमादिलऊला 1425 हि० / जुलाई 2004 ई०

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन की

इस्लामी, ज्ञान व शोध

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

मार्च 2014

शुआ-ए-अमल

"लखनऊ"

मिलने का पता

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक, लखनऊ - 3

Phone No: 0522-2252230 Mobile No: 09335276180 — 09335996808

सै. कल्बे जवाद नक़वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ-ए-अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ-3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै० मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़ जाएसी'।

Per Copy 30/- **Annual 300/-**

R.N.I. No.
UPBIL/2004/13526



Postal Regd. No.
SSP/LW/NP-75/2008-10



WEBSITE:
www.noorehidayatfoundation.com
www.al-ijtihaad.com

E_mail:
noorehidayat@yahoo.com
noorehidayat@gmail.com

वार्षिक अंशदान

1- यूरोप, अमरीका, कनाडाः
80 अमरीकी डालर

2- ख़लीजी मुमालिकः
60 अमरीकी डालर

3- एशिया, पाकिस्तानः
40 अमरीकी डालर

4- पाकिस्तान ज़मीनी डाकः
20 अमरीकी डालर

लाइफ़ मेम्बरशिपः 4000/-

fo'k; lwph

मार्च 2014ई०

रबीउस्सानी व जमादिउल अव्वल 1435हि०

FORM-IV

(See Rule No-8)

1. Place of Publication:	Noorehidayat Foundation Imambara Ghufranmaab, Maulana Kalbe Husain Road, Chowk, Lucknow
2. Periodicity:	Monthly
3. Printer's Name:	Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Address:	39, Jauhari Mohalla, Chowk, Lucknow
4. Publisher's Name:	Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Address:	39, Jauhari Mohalla, Chowk, Lucknow
5. Editor's Name:	Syed Mustafa Husain Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Local Address:	Imambara Ghufranmaab, Maulana Kalbe Husain Road, Chowk, Lucknow
Permanent Address:	Mohalla Syedana, Qasba Jais, Distt. Raibareli (U.P.)
6. Owner's Name:	Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Address:	39, Jauhari Mohalla, Chowk, Lucknow

I Syed Kalbe Jawad Naqvi, hereby declare that the particulars given are true and correct to the best of my knowledge and belief.

Lucknow — Syed Kalbe Jawad Naqvi

Date: 30-03-2014 — Printer and Publisher

ज़िन्दगी का सिस्टम

y§kd %आयतुल्लाहिल उज़मा सय्यदुल उलमा मौलाना सै0 अली नक़ी नक़वी
l Eiknu %नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

¼fdLr %20½

jkts sds: gluhQk;ns

अब सवाल के इस हिस्से पर नज़र डालने का वक़्त आया है कि इस्लाम ने तीस (30) दिन के रोज़ों क्यों रखे हैं और क्या इसका मक़सद सिर्फ़ रूहानी तरक़्क़ी है?

इसमें कोई शक नहीं कि वह वजिब बातें जो इस्लाम की ज़बान में इबादत के तौर पर रखी गयी हैं यानि जिसमें क़ुर्बत की नीयत (खुदा के क़रीब होने का इरादा) की जरूरत है, उनका मक़सद ज़रूर रूहानी तरक़्क़ी है। अगर सिर्फ़ जिस्मानी फ़ायदा नज़र में होता तो सिर्फ़ उनका किसी न किसी तरह कर लेना ही चाहे बग़ैर किसी नीयत के हो ज़िम्मादारी के पूरा होने के लिए काफ़ी होता मगर *क़ुरब–तन् इलल्लाह* इस काम के करने का मतलब ये है कि हम इसे रूहानी तरक़्क़ी के लिए करते हैं, मगर इस्लाम की जितनी इबादत हैं वह सिर्फ़ मन और ध्यान से लगाव नहीं रखती कि इस में जिस्म के हिस्सों का कोई सम्बन्ध न हो बल्कि उनमें उठना बैठना और ऐसे तरीक़े भी हैं जो जिस्म से जुड़े हैं। इस लिए रूहानी तरक़्क़ी के साथ उनमें माद्दी (Material) फ़ायदे भी छिपे हैं।

रूहानी तरक़्क़ी एहसास (बोध) व मारेफ़त (ज्ञान/पहचानना) से पैदा होती है, उसका ताल्लुक़ अल्लाह से भी हो सकता है और दूसरे लोगों यानी खुदा के बन्दों से भी, और माद्दी फ़ायदे सिर्फ़ खुद के लिए भी हो सकते हैं और वह भी जो दूसरों तक पहुँचते हैं।

अब देखिए कि ऐसे में रोज़े के कितने फ़ायदे हैं।

सबसे पहली चीज़ रूहानी तरक़्क़ी जो अपने को खुदा का बन्दा (दास) समझने से पैदा होती है, यही इबादत भक्ति की अस्ल रूह और हक़ीक़त है और उससे आदमी को अपने काम की देखरेख का ख़्याल पैदा होता है कि वह कोई ऐसा काम न करें जो खुदा के मर्ज़ी के ख़ेलाफ़ हो।

मिट जाने वालों की आखिरी ऊँचाई वाजिब ('अनन्त', परम अस्तित्व) के साथ ज़्यादा से ज़्यादा जुड़ने में है। और ये रिश्ता मज़बूत होता है अपनी लाग और अपनी ज़रूरत को क़ुबूल करने से, जितना ज़्यादा उसको अपनी ज़रूरत का खुदा के आगे क़रार होगा उतनी ही उसकी आशा, चाह उसकी तरफ़ ज़्यादा मुड़ेगी और लगाव उसकी तरफ़ ज़्यादा बढ़ेगा और जितना उसकी चाहत का हाथ ज़्यादा फैलेगा उतना ही दाता और सखी (उदार) मालिक की तरफ़ से प्रदान की बारिश ज़्यादा होगी। इसी लाग, ज़रूरत के क़ुबूल करने का नाम है भक्ति का एहसास और उसी दर्जे को पा लेने का नाम है भक्ति जिस की तरक़्क़ी मानवता का कमाल बल्कि उसकी चोटी है, यहाँ तक कि वह जो विश्व की तरक़्क़ी का आख़री प्वाइन्ट थी यानी हमारे रसूल (स0) की ज़ात, उनके दर्जे की ऊँचाई का सबसे ज़्यादा नमूना जो सामने किया गया और जिसका नाम 'मेराज' है, वह बन्दे की हैसियत या रूप से था। इसी लिए कहा गयाः *सुब्हानल्–लज़ी अस्रा बि अब्दिहि लैलम् मिनल मस्जिदिल् हराम् इलल् मस्जिदिल अक़्सा (पाक है वह जो अपने बन्दे/दास को मस्जिदिल हराम (पाक पवित्र मस्जिद) से मस्जिदिल अक़्सा (सबसे दूर वाली/अर्श वाली मस्जिद ले गया)*

इस बन्दे होने के एहसास का असर ज़िन्दगी के हर पहलू पर पड़ेगा और जो काम इस अहसास को पैदा करने वाला हो वह इन्सान की ज़िन्दगी में उसके अ़मल को सुधारने की वजह है। हो सकता है कि कोई काम आने से छोटा हो लेकिन अगर उसने इन्सान के दिल और दिमाग़ को उस के बन्दे होने के एहसास का केन्द्र (Centre) बना दिया तो उसका असर भरपूर होगा जैसा कि कहा गया :

"नमाज़ बुरी बातों से दूर रखने वाली है। ये सिर्फ़ उस एहसास और प्रतिक्रिया (Reaction) की

वजह से जो नमाज़ से इन्सान के मन में पैदा हो सकता है।

अब देखिए कि रोज़ा का फ़ायदा भी कुरान मजीद ने क्या बताया है, पढ़िए इस आयत को *"या अय्युहल्लज़ी–न आ–मनू कुति–ब अ़लैकुमुस्सियामु कमा कुति–ब अ़लल्लज़ी–न मिन क़ब्लिकुम लअ़ल्–लकुम तत्–तक़ून "*।

[ऐ इमान लाने वालो! तुम पर रोज़ा रखना ऐसा ही फ़र्ज़ (ज़रूरी) किया गया है जैसा तुम से पहले लोगों पर किया गया था। 'शायद' तुम में परहेज़गारी (संयम) पैदा हो जाय।]

तरजुमें में हमने कह दिया "शायद" मगर शायद का मतलब क्या है? याद रखना चाहिए कि तमन्ना, आशा (चाह), सवाल और तअ़ज्जुब के लफ़्ज़ जब हमारी ज़बान पर आते हैं तो उससे कुछ ख़ास तरह की बात ज़ाहिर होती है।

'तमन्ना' एक ऐसी चीज़ के चाहने का पता देती है जिसका पाना आदमी की सकत और बस से बाहर हो, 'तरजी' एक ऐसी चीज़ की उम्मीद को ज़ाहिर करती है जिसके होने का पूरी तरह यक़ीन न हो, सवाल और ताज्जुब वग़ैरह, मगर जब इन लफ़्ज़ों का इस्तेमाल अल्लाह के कहने में आये तो उसमें ऐसी बातें नहीं हो सकती।

वह अल्लाह अगर तमन्ना करे तो ये नहीं समझना चाहिए कि वह उस चीज़ के पाने की चाह करता है मगर ये उसके बस से बाहर है, वह अगर उम्मीद के लफ़्ज़ इस्तेमाल करें तो ये नहीं समझना चाहिए कि वह नतीजे (Result) से अन्जान है।

मआ़ज़ल्लाह, न उसकी कुदरत (सकत) में कोई कमी है न उसके इल्म ज्ञान में कमी है, फिर ये हो भी कैसे सकता है बस इस कमी के शुब्हे को दूर रखते हुए जो उन लफ़्ज़ों के माने से जुड़ा मतलब मिले वह ख़ुदा के कलाम (बोल) से साबित रहेगा।

जब वह तमन्ना के लफ़्ज़ इस्तेमाल करे तो यह समझ में आयेगा कि इस काम का होना उसका चहीता है। मगर वह उसको किसी वजह से खुद अपनी ऊपरी ताक़त से करना नहीं चाहता। इसलिये वह अगर ज़िद (उल्ट (Opposite) के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करता है। मिसाल के तौर पर :–

काफ़िरों के बारे में कहे"

"काश! यह लोग ईमान ले आयें।"

इसका मतलब ये होगा कि उनका ईमान लाना केशक ख़ुदा को चहीता है और यही ख़ुदा चाहता है। मगर अपनी हिकमत (समझबूझ) और इस दुनिया के नेज़ाम की (भीतरी) सोच समझ की मजबूरी से जिसकी माँग ये है कि बन्दों के अ़मल खुद उनके (बन्दो के) ही संकल्प से पूरे हों। वह ऊँपरी ताक़त से सबको ईमान के रास्ते पर लाना भी नहीं चाहता इस लिये वह तमन्ना के लफ़्ज़ इस्तेमाल करता है। इसी तरह अगर "लअल्ला" (शायद) का इस्तेमाल हो तो उसके मानी ये होगें कि उस चीज़ के पाने के लिए जो 'शायद' के बाद बयान की गयी हो वह चाहता है। बेशक इसमें शर्ते हट जाने या मौक़ा पैदा होने की उम्मीद है। इसलिये 'लअल्ला' (शायद) इस्तेमाल किया गया अब अगर ये 'लअल्ला' (शायद) किसी ख़ास हुक्म के बाद आये तो ये मतलब होगा कि वह पहले वाला हुक्म उसके बाद वाले नतीजे का चाह और उसकी वजह है।

अब ये आयत *"या अय्युहल्लज़ीना आ–मनू कुतिबा अ़लैकुमुस्सिया–म कमा कुतिबा अ़लल्लज़ी–न मिन क़ब्लिकुम ल–अ़ल्–लकुम तत्तकून"।*

जब पहले टुकड़े को आख़िर के साथ जोड़ कर देखिये तो इसका मतलब ये होगा कि रोज़ा इसलिए वाजिब किया गया कि वह तुम में तक़वा (ख़ुदा का डर, संयम) पैदा होने को चाहता है यानि रोज़े की वजह से तुम्हारे अन्दर तक़वा पैदा होगा।

अब ये बात रह गई कि "शायद" क्यों इस्तेमाल किया गया। सच्चाई ये है कि 'न जानना' कभी तो असल बात से जानकारी न होने का नतीजा होता है और कभी कहने या बताने के मौक़े पर 'अनजानपन' खुद असल बात में तरह–तरह के पहलू और फ़र्क़ का नतीजा होता है। मतलब इसका ये है कि रोज़ा बेशक तक़वा (संयम) की वजह और उसकी मांग है मगर कुछ लोग रोज़े को ऐसे में रखते हैं कि उसका असर नहीं पैदा होने पाता। कुछ लोग इस तरह रखते है कि उसका असर अधूरा होता है। और कम लोग ऐसे हैं जो इस तरह रोज़े को रखें कि उसका असर बिल्कुल पूरा हो जाए।

ख़ुदा का हुक्म अगर सिर्फ़ एक इन्सान के लिए होता तो बेशक वह अपने ज्ञान से हर एक के बारे

में रोज़े का जो नतीजा होगा उसे एक तरह से बयान कर देता। इसी तरह अगर हुक्म बहुत से लोगों के लिए अलग–अलग अपने–अपने निजी गुणों के लेहाज़ से हो जब भी आसान है कि हर एक को अलग–अलग उसका नतीजा बता दिया जाये लेकिन जबकि सबके सब लोगों को एक आम Title से बताया जाए और उस आम Title के ख़ास लोगों में रंग–रंग के और अलग अलग हों तो ज़रूरी है कि बताने के मौक़े पर शक और सन्देह का परदा पड़ जाये, इसलिये नहीं कि उसके जानने में कमी है बल्कि इसलिये कि इस Title के लेहाज़ से कोई एक निश्चित नतीजा नहीं हो सकता। वह अगर *'या अय्–युहल्लज़ी–न'* आ–मनू' से उन पूरे (निपुर्ण) मानवों को मुख़ातिब (Address) कर रहा होता जैसे ख़ास मोहम्मद (स0) व आले मोहम्मद (अ0) को तो उस वक़्त नतीजा एक होता क्यों कि इनका रोज़ा बेशक इसी शान का है जो तक़्वा की ज़मानत (Guarantee) है लेकिन जब कि Address मोमेनीन के समूचे गरोह से है जिसमें पूर्ण–निपुण भी हैं, अधूरे खोटे भी हैं, तो कैसे निश्चित तौर पर कहा जाए कि तुम रोज़ा रखोगे तो तक़्वा का गुण (Quality) ज़रूर पैदा होगा। बेशक ये रोज़ा तक़्वा चाहता है और तक़्वा पैदा करने की वजह बनता है इसलिये इस तरह कह दिया जाता है कि इसके बाद तक़्वा का गुण (Quality) पैदा होने की उम्मीद है, लेकिन तुम्हारा काम है कि तुम इस उम्मीद को पूरा होने दो। और ऐसे मौक़े पैदा न करो जो रोज़े के असर को मिटा दे या उसके असर को अधूरा छोड़ दें। अब देखिये कि ये तक़्वे का गुण है क्या? जिसे रोज़े का मक़सद और नतीजा बताया गया है। मालूम होना चाहिये कि ये गुण इतना ऊँचा है कि इसे आदमी की बड़ाई का मेयार (Standard) कहा गया है *''इन्–न अक्–र–मकुम इन्दल्लाहि अत्क़ाकुम''*

''तुममे सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो सबसे ज़्यादा तक़्वे का गुण रखता हो। ''लोग तर्जुमा करते हैं कि जो सबसे ज़्यादा ख़ुदा से डरने वाला हो। मगर ख़ुदा से डरने का क्या मतलब है?

याद रखिये कि डरा जाता है तीन तरह की चीज़ों से– एक वह जो देखने में भोंडा और डरावना हो जैसे भूत परैत की ख़्याली मूर्ति या चित्र।

दूसरा वह जिसको आदमी ने पहले कभी न देखा हो और उससे उसका सामना पहली बार हो रहा हो इसलिये उससे जी उकताता और दहलता हो।

तीसरे वह चीज़ जो नुकसान पहुँचाने वाली और दुःख देने वाली हो जैसे ज़हरीले और काटने वाले जानवर या फाड़ खाने वाले जानवर।

अब देखिये कि ख़ुदा में क्या इनमें से कोई चीज़ भी डरने की पायी जाती है? बिल्कुल नहीं। डरावना कैसा!! वह तो परम (Absolute) सौन्दर्य है और आदमी का शुरू से पालने वाला, नाथ और Guardian है, इसकी नेमत और दान में आदमी ने आंखे खोली और एक–एक सांस लेता हुआ आयु के इस प्वाइन्ट तक पहुँचा फिर अगर मॉं–बाप के साथ इन्सान को लगाव मोहब्बत होती है तो इससे ज़्यादा लगाव मोहब्बत अपने पालनहार से होना चाहिए। न माज़अल्लाह, वह नुक़सान पहुँचाने वाला है इसके जाबिर (बलशील) व क़हहार (पराक्रमी) होने के वह माने बिल्कुल नहीं जैसे बादशाहों को जाबिर व क़ाहिर कहते हैं। या जैसे गुस्सेदार आदमी से आदमी डरता है कि बात न करें वरना फाड़ खायेगा। ख़ुदा तो वह है कि''

'उसकी रहमत (दया) ग़ज़ब (प्रकोप) के आगे है' वह जाबिर व ज़ालिम (अत्याचारी) बिल्कुल नहीं बल्कि 'टूटी हड्डियों को जोड़ देने वाला है।'

फिर डरना इससे काहे का? सच्चाई में ख़ुदा से इन्सान को नहीं डरना है बल्कि अपने आप से डरना है। उन करतूत से डरना है जो ख़ुदाकी मर्ज़ी के ख़ेलाफ़ हों और जितनी ख़ुदा की महानता मन में ज़्यादा होगी उतना ही अपने कर्म की कमियों का डर ज़्यादा पैदा होगा। इसी का नाम है तक़्वा (संयम) और नतीजा ये होगा। दिल दिमाग़ के असर लेने का ख़ुदा की महानता का एहसास है। जब ये असर आदमी के मन पर बन जायेगा तो आदमी के सारे काम व कर्मों में संतुलन (Balance) पैदा हो जाएगा और हर पल अपने धर्म, कर्त्तव्य को पहचानने की बात पैदा हो जायेगी क्योंकि सारे काम आदमी के जिस्म के हिस्सों के लेहाज़ से बंटे हुए है और जुर्म भी इसी लेहाज़ से बंटे हुए हैं। कुछ आँख के गुनाह हैं, कुछ गुनाह कान से लगाव रखते हैं कुछ छूने से, कुछ हाथों के और कुछ पैरों के, जैसा कि फ्लास्फ़रों ने कहा है कि आदमी का अन्तर्मन अपने एक होने के साथ–साथ सारी शक्तियों का गठजोड़ है जो ताक़त शक्ति अन्तर्मन

को असर में ले लेगी वह एक वक़्त में अकेली जिस्म के सब हिस्सों पर असर कर ले जायेगी और काम व कर्मों में फ़र्ज़ कर्त्तव्य को पहचानने की सकत पैदा कर देगी। जिसका दूसरा नाम है तक़्वा (संयम)। इस लेहाज़ से नमाज़ को कहा गया है कि *''इन्नस्सलाता तन्हा अनिल फ़हशाई वल मुनकर''* 'नमाज़ बुरी बातों और गुनाहों से रोकती है।'

और इस लेहाज़ से रोज़े को तक़्वा का सबब बताया गया है कि *''कुति–ब अ़लैकुमुस्सियाम''* से *''लअ़ल्लकुम तत्–तकून''।*

अब देखिये कि रोज़ा किस तरह आदमी के मन, अन्तर्मन पर ख़ुदा की महानता के असर को बनता है। बात ये है कि आदमी अपनी माद्दी (Material) ज़रूरतों को बहुत कुछ समझता है और इस दरजे तक उसका असर इस पर होता है कि वह अपने को इनके बीच जकड़ा पाता है और इनसे दूर रहना अपने लिये बहुत कठिन समझता है। खाने पीने और ज़िन्दगी की ज़रूरतों की क्या बात, नासमझी की चीज़ें जिसका वह आदी हो जाता है जैसे सिगरेट, बीड़ी, हुक़्क़ा, तम्बाकू वग़ैरह, इनका ऐसा लतिया हो जाता है कि इसके छोड़ने के ख़्याल से ही कांप जाता है। हा, इस मामले में ज़रा किसी की बात पर कम ही ध्यान दे सकता है। आपका कोई दोस्त, कोई सगा सम्बन्धी, कोई आदर वाला आदमी आपसे कहे कि दिन भर भूखे रहो, सिगरेट न पियो, तम्बाकू न खाओ, मैं नहीं समझता कि आप इस बारे में किसी की बात मान लेंगे। मगर रोज़े में सिरजनहार की अनदेखी ताक़त का दबाव होता है जिसके असर से आदमी इन सब बातों से जो आम तौर से उसकी ज़िन्दगी की ज़रूरतों में होती है, उनसे दूर रहता है। आदमी उसके हुक्म के मुक़ाबले में अपनी ज़रूरत को कुछ भी नहीं समझता है और अपनी तकलीफ़ को सह लेता है। याद रखिये इसी एहसास की तरक़्क़ी वह है जो एक वक़्त में आदमी को जेहाद के मैदान में अपनी जान तक की कुर्बानी पर उकसा सकती है, सिर्फ़ इसलिये कि सिरजनहार की महानता और उसके हुक्म की अहमियत का एहसास इतना है कि आदमी अपनी ज़िन्दगी की अहमियत को उसके मुक़ाबले में कम समझने लगा।

बेशक यहां पर ये सवाल पैदा हो सकता है कि ख़ुद रोज़ा रखना इस एहसास पर निर्भर है, यानी अगर इन्सान के मन में उसकी महानता और उसकी अहमियत का असर हुआ ही न हो तो वह रोज़ा रखने का कष्ट क्यों झेलेगा। ख़ुद रोज़ा रखना भी उस एहसास का नतीजा है। फिर रोज़ा इस एहसास के पैदा करने की वजह कैसे समझा जा सकता है। मगर इसका जवाब बिल्कुल आसान है। जिस तरह कसरत ज़ाहिर है कि ताक़त पर निर्भर है। अगर ताक़त ही न हो तो कोई कसरत कैसे कर सकता है, लेकिन खाने पीने से ताक़त भी पैदा होती है। मतलब ये है कि एक ख़ास दर्जे तक ताक़त का जिस्म में होना कसरत के लिए पहले से ज़रूरी है, लेकिन कसरत के ज़रिये यह ताक़त बढ़ती रहती है। इसी तरह जब आदमी रोज़ा रखेगा तो एक ख़ास दर्जे का ख़ुदा का यक़ीन पहले से ज़रूरी होगा। इसीलिये रोज़े की आयत में हुक्म के शुरू में कहा गया है *''या अटयुहल्लज़ीन्न आ–मनू'* अगर ईमान ही न हुआ तो रोज़े के हुक्म का मानना न होगा, लेकिन रोज़े से यह सोच और एहसास बढ़ता रहेगा यहां तक कि वह दर्जा मिल जाय जो रोज़े के पहले बिल्कुल न था।

अब एक दूसरा पहलू देखिये। जितने जुर्म अपराध हैं उनका सोता आदमी के लगाव हैं जिनका नाम जज़्बे, भावनाएं है, वह चाहे Nervous सिस्टम के आधीन हों, चाहे इच्छाओं के मातहत हों, आदमी की मानवता/इन्सानियत इन भावनाओं को कन्ट्रोल करने में है। आदमी वह नहीं है जिसे गुस्सा आये ही न। गुस्सा तो इन्सान के लिये एक ज़रूरी चीज़ है जिससे बहुत से सराहना वाले पहलू भी सामने आते हैं लेकिन इन्सान वह है जो गुस्से का बेवजह इस्तेमाल न करे। इन्सान वह नहीं जिसकी इच्छा की ताक़त बिल्कुल मुर्दा हो यानी चाहतों की जिसमें पैदावार ही न हो। ऐसा इन्सान तो रोगी है। इन्सान वह है जो अपनी चाहतों का सही ढंग से सही मौक़े अवसर को देखते हुए पूरा करे। इन्सान और जानवर में यही फ़र्क़ है। खाने की चाह जानवर को भी होती है और इन्सान को भी, मगर जब जानवर को खाने की ख़ाहिश होती है तो वह जिसका भी खेत होगा उसमें चरने लगेगा, अगर इन्सान भी ऐसा हो कि भूख लगी तो जिसका माल मिला खा गया तो उसमें और जानवर में कोई फ़र्क़ नहीं है। गुस्सा इन्सान को भी आता है और जानवर को भी, मगर जानवर को जब गुस्सा आयेगा

तो वह ये नहीं देखेगा कि सामने छोटा बच्चा है या बूढ़ा या जवान, उसे हमला करने से मतलब होगा। अगर इन्सान ने भी गुस्से के वक़्त कब और कहां को न समझा तो उसमें और जानवर में क्या फ़र्क़ है। नहीं बिल्कुल नहीं। इन्सान वह है जो अपने गुस्से और इच्छा (Sexual desires) और अपने सारे मेलानों और चाहतों पर खुद काबू रखे, इन्सान की इन्सानियत इसी से शुरू होती है और इसी पर ख़त्म। इस्लामी शरीयत के सभी इन्सान के इसी गुण को तरक़्क़ी देने वाले हैं। इसने ऐसे ज़रिए पसन्द किये हैं कि इन्सान को अपनी चाहतों पर ज़्यादा से ज़्यादा कन्ट्रोल करने की बात पैदा हो जाये, इसके लिये उसने अलग–अलग तरीक़े अपनाये हैं। जिस तरह जिस्म की कसरत में आपने देखा होगा कि जिस्म को अलग–अलग (Different) पहलुओं की तरफ़ बार–बार मोड़ा जाता है और एक ही भार को अलग–अलग तरह से ऊठाया जाता है और अलग–अलग तरह से घुमाया जाता है, सिर्फ़ इसी लिए कि जिस्म में लोच पैदा हो और इरादे के मातहत जिस तरह हिलने डुलने की ज़रूरत है और जिसका भार जिस तरह उठाना हो, उसकी समाई सकत पैदा हो, इसी तरह इस्लाम ने इन्सान के मन और आत्मा की कसरत की है। और अलग–अलग तरह से इसको अपनी चाहों से मुक़ाबला करने की प्रैक्टिस कराई है। सबसे पहली सूरत ये थी कि इसने इन्सान को तरह–तरह के मज़े वाली चीज़ों के इस्तेमाल से पूरी तरह से मना नहीं किया है। अगर इसने पहले ही से पूरी तरह से दुनिया से नाता तोड़ लेने वाली ज़िन्दगी जीने का हुक्म दिया होता और दुनिया के मज़े से अलग ही कर दिया होता तो फिर भी आसान था कि आदमी की भावनाएं मुर्दा हो जातीं और किसी चीज़ की ख़्वाहिश पैदा ही न होती मगर उसने खाने में एक से एक मज़े की चीज़ों की इजाज़त दी और दुनिया में इन्सान के मुंह और ज़बान के बढ़ावा दिया। फिर भी ये कह दिया कि ख़बरदार उस जानवर का गोश्त खा सकते हो जो हराम नहीं है और ज़बह किया गया हो यानि अल्लाह का नाम लेकर ज़बह किया गया हो। इस तरह इन्सान में अपने फ़र्ज़ कर्त्तव्य की पहचान का जज़्बा जगा रहा। अब बहुत ही मज़ेदार गोश्त सामने है मगर ये पता चला कि वह ज़बीहा (अल्लाह के नाम पर ज़बह करना) नहीं और इन्सान ने उससे मुंह मोड़ा। इसके मानी ये है कि इन्सान अपने पेट को भरने की ख़्वाहिश में आपे से बाहर नहीं हुआ। इसी तरह अच्छे से अच्छे कपड़ा पहने मगर वह शुद्ध रेशम न हो, अब आपको अच्छे से अच्छे कपड़े की फ़िक्र है, फिर भी एक कपड़ा दिखायी देता है जो अगर शुद्ध रेशम है, बहुत उमदा कपड़ा है, दिल तड़पा जाता है, मगर आप इसको लेने से अपने आपको रोक लेते हैं, इसलिये कि वह शरीयत के ख़ेलाफ़ है।

हद ये है कि जैसा मैने दूसरे मौक़े पर कहा है कि वह निरी माददी खाहिशें जो बहुत कम इन्सान और जानवर में फ़र्क़ बाक़ी रखती हैं, उनकी चाहत बहुत हो और एक वक़्त ऐसा आ जाए कि जब सारी दूरियां ख़त्म हो जाएं और दोनों दिल राज़ी, तो फिर भी शरीयत के पाबन्द (बन्धे) इन्सान को ख़्याल आता है कि जब तक वह ख़ास शब्द जिनका नाम है सीग़ए–अ़क़्द (वह खास शब्द जो निकाह के लिए पढ़े जाते हैं) ज़बान पर नहीं आये, उस वक़्त तक ये हराम है। इसके मानी ये है कि मन के जज़्बों के इस ज़ोर में भी इन्सान क़ाबू से बाहर नहीं हुआ और उसके अन्दर फ़र्ज़ का एहसास बाक़ी है।

ये सब सूरतें इन्सान को अपनी ख़्वाहिशों पर क़ाबू रखने के लिए थीं मगर ये वह चीज़ें हैं जो बराबर से नाजायज़ हैं। एक इन्सान जो अच्छी सीख में पला है चूंकि वह कभी इन चीज़ों के पास नहीं फटका इसलिये इसे इनकी चाहत भी नहीं है बल्कि मन में अकसर एक तरह की घिन इन चीज़ों से पैदा हो गयी है। वह लाख शराब के दिल लुभाने वाले बयानों को सुने मगर उसके दिल कभी उस तरफ़ नहीं आता इसलिये कभी पी ही नहीं, वह डॉक्टरों की ज़बानी सूअर के गोश्त के फ़ायदे सुनता है, मगर कभी वह उसकी ख़्वाहिश नही करता। अगर कोई इसके इस्तेमाल की दावत दे तो एक नफ़रत सी पैदा होगी। यूंही उन सारे गुनाहों जिनसे पूरी तौर पर दूर रहा है इनकी आरज़ू भी इस में बाक़ी नही रही है। कुदरत ने चाहा कि एक ऐसा मौक़ा भी आजाए जब वह ही हलाल और जाएज़ ख़्वाहिश जिन्हें इन्सान पूरा करता है उसे एक महदूद वक़्त (सीमित वक़्त) जो काफ़ी लम्बा भी है, रोक दी जायें तो ये है कड़ा इम्तेहान। शराब ना पीना आसान है मगर गर्मी के मौसम में दोपहर के वक़्त जब थोड़ा सा रास्ता चलकर धूप में आये भी हों ठण्डा

पानी सामने कोरे घड़े में रखा देखते हुए इस पानी की तरफ़ मुंह न करें। बड़ी भूख है और रोज़े के उतार का वक़्त, मगर खाने की तरफ़ तवज्जो न हो, हालांकि घन्टों का इन्तेज़ार कैसा मिनट मिनट का इन्तेज़ार हो रहा है मगर ये मिनट का इन्तेज़ार और घड़ी का देखना भी फ़र्ज़ की पहचान का नतीजा है और दूसरी तरह की माद्दी ख़ाहिशों की चीज़ें मौजूद हों मगर फ़र्ज़ का एहसास मौजूद हो, गरम वक़्त में सुहावने हौज़ के पानी में उतरें और दिल चाहे तो डुबकी पर डुबकी लगायें मगर ये फ़र्ज़ का एहसास उसे ऐसा करने से रोक देता है। ये वह चीज़ें है जिससे इन्सान की हर ख़ाहिश इसके क़ाबू में नज़र आती है और ऐसी प्रैक्टिस बराबर करने से उस नेक काम को आसानी के साथ कर लेने की सलाहियत (Capability) पैदा हो जाती है। और इन्सान इस मानवता के गुण में तरक़्क़ी करता है जहां तक पहूँचना इन्सान का अस्ली मक़सद ध्येय है।

इसके अलावा रोज़े से एक और शिष्ट एहसास इन्सान में पैदा होता है और वह एहसास ग़रीबों की तकलीफ़ और उनके दुखः दर्द को समझना और आदर है। मालदार लोग जिन्हें हर तरह के साधन मिले हुए हैं उन्हें कभी भूख की तकलीफ़ का अन्दाज़ा नहीं होता और इसलिये ग़रीबों की क़दर नहीं करते। उन्हें कभी तकलीफ़ भी हुई तो पाचन की और मेदे की ख़राबी की। जबरान ख़लील जबरान अरब का बहुत बड़ा लेखक (Writer) था। इसने एक क़िस्से में इस सच्चाई को यूं बयान किया है कि ''रास्ते से गुज़र रहा था, एक दौलतमन्द को देखा पेट पर हाथ रखे हुये है, मालूम हुआ रात को खाना ज़्यादा खा लिया है, खाने की ज्यादती की वजह से पेट में दर्द हो रहा है।''

आगे बढ़ कर एक ग़रीब को देखा पेट पर हाथ रखे हुये है, मालूम हुआ ये भूखा है और भूख की तकलीफ़ से पेट पर हाथ रखे हुये है। अगर खाने का वह बढ़ा हुआ हिस्सा जो दौलतमन्द ने बेज़रूरत खा लिया था वह इस ग़रीब को मिल जाता तो दोनों इस तकलीफ़ से बचे रहते। न इस अमीर को पेट के दर्द होती और न इस ग़रीब को भूख की तकलीफ़ सहना पड़ती।

शरीयत ने चाहा कि हर साल एक ऐसा मौक़ा भी आ जाये जब लगातार कुछ दिनों के लिये अमीरों को भी भूख की तकलीफ़ का एहसास हो जाये और ग़रीबों की तकलीफ़ की क़द्र और इस तरह वह उनकी ख़बर लेते रहा करें।

ये रूहानी फ़ायदे का पहलू था अब रहे माद्दी फ़ायदे , मैने कहा कि वह दो क़िस्म के है, एक वह जो खुद इस आदमी की ज़ात को पहुँच सकता है, दूसरे वह जिसका फ़ायदा दूसरों सारे को पहुँच सकता है। सबसे पहला माद्दी फ़ायदा (Physical Advantage) ये है कि अक्सर इंसान के जिस्म में पित्त, कफ़ वग़ैरह किसी एक जगह ऑतों में जाकर जमा हो जाता है जो रोज़े की वजह से घुल–मिल कर ख़त्म हो जाता है। डाक्टरों से पूछिए खाना छोड़ना अकसर मर्ज़ का रेगुलर इलाज है। और बहुत सी सूरतों में फ़ायदे का है।

दूसरे ये कि पाचने की ख़राबी जो एक तरह से मर्ज़ की जड़ है और इसका सही रहना सेहत (Health) का राज़ है इसके बैलेंस (Balance) को बाक़ी रखने के लिए 11 महीने तक जो मशीन चलती रहती है उसे एक महीने तक किसी हद तक चैन लेने का मौक़ा दिया जाता है। अगर बेएहतियाती (Disbalance) से काम न लिया जाये तो तर्जुबा बताता है कि रमज़ान के महिने के बाद मेदे में नये सिरे से एक ताक़त पैदा हो जाती है और उसका नेज़ाम पहले के से बहुत दुरूस्त हो जाता है।

तीसरे ये कि इन्सान को मेहनत की आदत पड़ती है और सहन की कूवत बढ़ जाती है और इस तरह इसमे ज़िन्दगी की खींचतानी में तरह–तरह के हालात गुज़रने की सकत पैदा होती है। सिपाहियों की फ़ौजी ट्रेनिंग का अन्दाज़ यही होता है कि इन्हें तरह–तरह के यानि सर्द व गर्म हालात का मुक़ाबला कराया जाये और इनको मुश्किलों का सामना करने के लिए तैयार किया जाए। रोज़े से जो सामूहिक (मेल जोल का) फ़ायदा मिल सकता है वह यह है कि एक इन्सान, अगर उसकी आमदनी ज़रूरी खर्चो से ज़्यादा नहीं है, ज़्यादा समाजी और मज़हबी कामों में हिस्सा लेने या दूसरे लोगों की ख़बर लेने (मदद करने) का हौसला रखता है मगर अपने और अपने बाल–बच्चों के खाने के खर्चों के बाद इसको कुछ बचता ही नहीं। समाज के नेक लोग अक्सर ऐसे मक़सद के लिये महीनें में एक बार लज़्ज़तों को छोड़ देने या हफ़्ते में एक दिन गोश्त न खाने को प्रोयोज़ करते हैं।●●●

t kjh——

HkkX; dk vfHkizk;

dqjvku ds ifjizs{; esa

eqQfDdjsbLyke MkW0 eqLrQk uklSEdYcs lkfnd lkgc fdCyk

भाग्य, उन इस्लामी विषयों में से है जिसके बारे में न केवल प्राच्य विद भ्रम का शिकार है बल्कि स्वंय मुसलमान धर्माचार्यों की बहुसंख्या भी इस विश्वास के बारे में बड़े जटिल भ्रम से ग्रस्त है। जब धर्माचार्य ग़लतफहमी में हो तो मुस्लिम समाज का ग़लतफहमी में फंस जाना सर्वथा स्वाभाविक बात है।

भाग्य में विश्वास को प्राच्यविदों ने मुसलमानों की उन्नति का कारण भी ठहराया है और पतन का कारण भी बताया है। उनके मत से यही विश्वास था जिसने प्रारम्भ में मुसलमानों को उन्नति के शिखर तक पहुंचाया और फिर यही विश्वास था जिसने पिछले युग में इन्हें अवमानना के पाताल में गिरा दिया। "हरि इच्छा निर्जित होके रहेगी।" जो बदा है वो हो के रहेगा। "भाग्य विधाता के लिखे को कोई मेट नहीं सकता।" मौत का समय निश्चित है मौत अपनी बेला पर ही आयेगी। न कोई उसे ला सकता है न कोई उसे टाल सकता है। प्राच्यविदों के मत से इन्हीं विश्वासों ने मुसलमानों में वह जोश और उत्साह और निडरता पैदा कर दी कि वह बड़ी से बड़ी शक्ति से टक्कर लेने लगे और फिर आंधी के समान सिंध से यूरोप तक छाते चले गये। मगर बाद में इसी भाग्य के विश्वास ने नकारात्मक रूप धारण कर लिया। भाग्य के विश्वास का कथन कभी यह था कि जो ईश्वर चाहेगा वही होगा, कोई हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता मगर बाद में इसका अर्थ यह ठहराया गया कि जो परमेश्वर चाहता है वही होता है। हम किसी का कुछ बिगाड़ नहीं सकते। इस नकारात्मक चिंतन शैली ने उनको सुस्त, आलसी और निराशवादी बना दिया जो परिणास्वरूप मुसलमानों के पतन का कारण बन गया।

वास्तविकता यह है कि आज भी मुसलमानों की बहुसंख्या "तक़दीर" (भाग्य) की इस गलत कल्पना को अपना विश्वास बनाये हुये है "तक़दीर का शब्द सामान्य रूप से उर्दू में बोला जाता है और समझा जाता है। अरबी भाषा से अवगत व्यक्ति इसी कार्य को कभी "क़ज़ा व क़द्र" के शब्दों से भी अदा करते हैं। "तक़दीर" व "कद्र" का सम्बन्ध तो सुविधापूर्वक समझ में आ जाता है इसलिए कि तक़दीर की धातु क़द्र ही है। "कद्र" का अर्थ पैमाना (नाप या जोख का औजार या साधन, नपना) है, "मिक़दार" (मात्रा) भी इसी धातु से बना है। क़ज़ा का अर्थ हिन्दी भाषा में निर्णय है। इसी आधार पर अरबी में निर्णय करने वाले (जज) को "क़ाज़ी" कहा जाता है। पारिभाषिक रूप में "क़ज़ा" से तात्पर्य "क़ज़ा–ए–इलाही" लिया जाने लगा अर्थात "इलाही फैसला" और इस धातु में "क़ज़ा" भी "तक़दीर" का निकटार्थक शब्द घोषित कर दिया गया। दिलचस्प बात यह हुई कि "तक़दीर" "क़ज़ा व क़द्र" (भाग्य व ईश्वरीय निर्णय) को "जब्र" (बाध्यकारिता) का पर्यायबाची बना दिया गया। जब्रदिल–इसलामी सिद्धान्त (Dogmatic,इल्म–ए–कलाम) की एक परिभाषा है जिसके सामने "इख़्तियार" का शब्द बोला जाता है। यही बाध्यता और छूट का प्रकरण इस्लामी सिद्धान्त शास्त्र का वह महिमामयी प्रकरण है जो इस्लाम के प्रारम्भिक युग से आज तक इस्लामी उलेमा में विवाद का विषय बना हुआ है और इस विषय पर इतना लिखा गया है कि शायद ही किसी अन्य विषय पर इतना लिखा गया हो। मनुष्य के बन्धित और विवश होने के विश्वास का सार यह है कि सृष्टिलोक में स्रष्टा की इच्छा सिक्का चला रहा ही है जो उसकी इच्छा होती है, वही होती है। जो उसकी जानकारी में है वह सृष्टिलोक में होकर रहता है और अचेतन सृष्टि की भांति मनुष्य भी अपनी "कथनी" करनी, आचरण और चिन्तन में पूर्णतया विवश है। छूट

और अधिकार (इख़्तियार) का सार यह है कि सृष्टिलोक की अचेतन सृष्टि निःसन्देह अपने विभिन्न चरणों में हरि इच्छा से बंधी हुयी है और पूर्णतया विवश है परन्तु मनुष्य को विवेक और बुद्धि दिये ही इसलिए गये हैं कि यह जो करे अपनी इच्छा से करे। अतएव मनुष्य की यह विशेषता है कि यह जो करता है अपनी इच्छा, अपने संकल्प और अपने अधिकार से करता है।

परन्तु तथ्य यह है कि पहला ही विश्वास मुसलमानों की बहुसंख्या में लोकप्रिय है। यहां तक कि बहुत से ग़ैर मुस्लिम प्राच्यविद इसे मुसलमानों का सर्वमान्य विश्वास समझने लगे हैं। कवियों ने भी इस मान्यता को हाथों हाथ लिया, उर्दू के सुख्यात अग्रणी कवि ''मीर'' ने कहा–

''नाहक़ हम मजबूरों पर ये तोहमत है मुख़्तारी की।
जो चाहें सो आप करे हैं हमको अबस बदनाम–किया।''

(मीर कहते हैं कि हम विवश जनों पर अधिकार सम्मत होने का लांछन अनायास लगाया जा रहा है। परमेश्वर जो चाहता है से सो आप करता है और व्यर्थ हमें बदनाम करता है।''

फ़ारसी का सुख्यात (मदिरा का कवि) ख़य्याम तो कुछ और आगे बढ़ गया और उसे जो कुछ कहा उसका भावार्थ यह है–

''मैं शराब पीता हूं और मदिरापान के नियमों से परिचित जन इस मदिरापान के औचित्य का मर्म जानते हैं। बात यह है कि मेरा शराबी होना ईश्वर के अनादि ज्ञान में था, अब अगर मैं शराब न पीता तो ईश्वर का ज्ञान, ज्ञान न रह कर अज्ञान बन जाता।''

दुर्भाग्य से पश्चिम निवासी प्राच्यविद दोहरे भ्रम का शिकार है। पहला भ्रम तो यह है उन्होंने भी ''तक़दीर'' या ''क़ज़ा व क़द्र'' को ''जब्र'' का पर्याय समझ लिया जबकि इन दोनों के अभिप्राय में पूरब–पश्चिम का अन्तर है। (जैसा कि आगे वर्णन किया जायेगा। दूसरा भ्रम यह है कि उन्होंने इस विश्वास को सारे मुसलमानों का सर्वमान्य विश्वास समझ लिया। यद्यपि शीआ समुदाय ''जब्र'' के विश्वास को नहीं मानता। निःसन्देह शीआ ''तक़दीर'' (भाग्य) के मानने वाले हैं। मगर उनके यहां तक़दीर का अभिप्राय वह नहीं है जो सामान्य मुसलमानों का उपरोक्त प्राच्यविद समझते हैं।

dfBukb;ka

यह विवाद आगे बढ़ेगा तो इसमें सिद्धान्त शास्त्र (dogmatics) की परिभाषायें आना आरम्भ हो जायेंगी जिनका उर्दूभिज्ञ वर्ग ही को समझाना कठिन है। हिन्दी में तो हमारी कठिनाई और बढ़ जायेगी। बहरहाल सद्‌यत्न किया जायेगा कि सरल से सरल भाषा में इन सूक्ष्म और पेंच भरे प्रकरणों पर वार्तालाप किया जाये।

fookn dsfopkj fcUnq

विचाराधीन प्रकरणों के तीन ही पक्ष सम्भव हैं। इनमें से प्रथम एवं द्वितीय जो पूर्णतया स्पष्ट हैं परन्तु तीसरा पक्ष स्पष्टीकरण के बिना समझ पाना दुष्कर है–

1–सृष्टि लोक में जो कुछ हो रहा है पहले से नियत कार्यक्रम के अन्तर्गत हो रहा है जिसमें न परिवर्तन लाया जा सकता है, न बदलाव उत्पन्न किया जा सकता है, सब पहले से नियत है, निर्धारित है। सृष्टिलोक में जो कुछ हो रहा है हरि इक्छा का कार्य संचालन है जिसका विरोध न किसी एक के वश में है और न समस्त सृष्टिलोक के वश में, न चैतन्य जीव के वश में न अचैतन्य जीव के वश में, वर्तमान पर भूत का आधिपत्य है और मनुष्य अपनी करनी, कथनी, आचरण और चिन्तन में विवश मात्र है जो हरि ने चाहा है वही यह सोचता है, कहता है, करता है।

2–ऐसा कोई कार्यकर्म पूर्व निर्धारित नहीं है। वर्तमान पर भूतकाल का कोई आधिपत्य नहीं है और मनुष्य अपनी करनी, कथनी और चिन्तन में पूर्णतया स्वतन्त्र और स्वाधीन है।

3–सृष्टिलोक की एक एक वस्तु चैतन्य और अचैतन्य, हरि इच्छा के सामने करबद्ध है और मनुष्य हो या ग़ैर मनुष्य सब उसके सम्पूर्ण नियन्त्रण में है परन्तु इस नियन्त्रण की शैली, इसका ढ़ंग ऐसा है कि इस नियन्त्रण के होते हुए भी इन्सान अपनी करनी, कथनी और चिन्तन में सर्वथा स्वतन्त्र है और यह नियन्त्रण उसकी स्वतन्त्रा और अधिकार की राह में बाधक नहीं।

dqlZ et hn

आइये देखें! कुर्आन पनीत, भाग्य के विश्वास के बारे में क्या फर्माता है। कुर्आन खोलते ही हमारी कठिनाईयों में वृद्धि हो जाती है क्योंकि कुर्आन महान की कुछ आयतें अगर पहले पक्ष के अनुमोदन में मिलती है तो कुछ दूसरी आयतें दूसरे पक्ष का समर्थन करती दिखती है। आयतों की संख्या बहुत अधिक है।

उदाहरण स्वरूप यहां केवल कुछ आयतें पेश की जाती हैं–

i gysi {kdhl eFkd vk;rsa%

1–तुम कुछ चाहते ही नहीं जो चाहता है वह अल्लाह चाहता है।(1)

2–हे पैग़म्बर! कह दीजिए कि प्रत्येक बात अल्लाह ही के हाथ में है। (2)

3–अल्लाह जिसको चाहता है शासन देता है और जिससे चाहता है राज्य छीन लेता है, जिसको चाहता है, सम्मान देता है, जिसको चाहता है अपमानित करता है। (3)

4–अल्लाह जिसको चाहता है, सन्मार्ग दिखा देता है जिसको चाहता है भटकता छोड़ देता है। (4)

5–कोई विपत्ति धरती तक या तुम्हारे प्राणों तक नहीं पहुंचती मगर यह कि उसके प्रकट होने से पूर्व ही हम उसे एक पुस्तक में लिख चुके होते हैं। (5)

6–हमने प्रत्येक वस्तु को उसके भाग्य के साथ रचा है। (6)

7–उसने प्रत्येक वस्तु को रचा फिर उसको एक भाग्य के साथ संलग्न कर दिया। (7)

इस प्रकार की आयतों पर दृष्टि पड़ती है तो अनुभव होता है कि प्रत्येक वस्तु अल्लाह के हाथ में है, वह जो चाहता है वही होता है। धन, निर्धनता, सम्मान, अपमान का अर्जन मनुष्य के अधिकार में नहीं, वह जिसको चाहता है देता है। हमारा चिन्तन तक उसकी इच्छा से प्रतिबन्धित है, विपत्तियां पहले से अंकित है। विधाता ने प्रत्येक वस्तु को जन्म दे के उसका भाग्य नियत कर दिया है।

f}Ùkh; i {kdhl eFkd vk;rsa%

1–परमेश्वर किसी जाति की दशा तब तक नहीं बदलता जब तक वह अपने को न बदले।''(8)

2–परमेश्वर किसी पर अन्याय नहीं करता। मनुष्य स्वंय अपने पर अन्याय करता है।(9)

3–जिसका मन चाहे ईमान (ईश्वर में निष्ठा) ग्रहण करे जिस कामन चाहे कुफ़्र (ईश्वर से इन्कार)। (10)

4–मनुष्य को वही मिलेगा जिसके लिये वह स्वंय प्रयत्नशील हो।(11)

5–हमने मनुष्य को मार्ग दिखा दिया अब चाहे वह (ईमान ग्रहण करके) कृतज्ञ हो जाये चाहे (कुफ़्र ग्रहण करके) कृतघ्न हो जाये। (12)

6–प्रत्येक मनुष्य अपनी कृतियों फंसा हुआ है। (13)

इन और इन सरीखी दूसरी आयतों से प्रकट होता है कि मनुष्य अपने कार्यों में पूर्णतया स्वतन्त्र है। वह अपनी दशा स्वंय बनाता है, बिगाड़ता है। वह अपने आप पर स्वंय अत्याचार करता है। ईमान और कुफ़्र (ईश्वर में निष्ठा और उससे विमुखता) सदाचरण और दुराचरण के चुनाव में पूर्णतया स्वतन्त्र है। जिस वस्तु के लिए यह प्रयत्न करे उसे प्राप्त हो जाती है। और यह अपनी सारी कृतियों के लिए उत्तरदायी है।

सारांश यह है कि प्रथम श्रेणी की आयतें मनुष्य के विवश होने को बताती हैं तो दूसरी श्रेणी की आयतें साधिकार और स्वतंन्त्र होने को। पहली श्रेणी की आयतें बताती हैं कि जो करता है, परमेश्वर करता है और दूसरी श्रेणी की आयतें बताती हैं कि जो कुछ करता है, वह मनुष्य स्वंय करता है।

यही ऊपर से देखने में परस्पर टकराती आयतें थीं जिनके आधार पर इस्लाम के प्रारम्भिक काल में ''जब्र और इख़्तियार'' का प्रकरण खड़ा हुआ और मुसलमान दो धड़ों में बंट गये। एक धड़ा ''जब्र'' को मानने लगा अर्थात जो कुछ होता है वह हरि इच्छा से होता है और मनुष्य विवश मात्र है, दूसरा धड़ा ''इख़्तियार'' को मानने लगा अर्थात जो कुछ करता है, वह इंसान खुद करता है, अपने संकल्प से करता है, अपने विवेकाधिकार से करता है फिर ''जब्र'' के मानने वाले उन आयतों का कुछ का कुछ अर्थ बताने पर विवश हो गये जिनसे मनुष्य का अधिकार सम्पन्न और स्वाधीन होना प्रकट होता था और ''इख़्तियार'' को मानने वाले व्यक्ति उन आयतों का कुछ और अर्थ बताने के लिए विवश हो गये जो मनुष्य के विवश होने को बता रही थी।

fopkj.kh; ckr%

परन्तु जो बात सर्वाधिक विचारणीय है, वह यह कि क्या ईश्वरीय वाक्य में टकराव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है! क्या क़ुर्आन की एक आयत दूसरी आयत के विपरीत हो सकती है। क्या यह बात संभव है कि क़ुर्आन की कुछ आयतें एक विचारधारा या विश्वास का समर्थन कर रही हों और दूसरी आयतें उसके सर्वथा विपरीत दूसरी विचारधारा या विश्वास का! ऐसी दशा में हमें क़ुर्आन के बारे में विश्वास और श्रद्धा को संभालने हेतु काले कोसों के सहीह मगर इधर उधर के स्पष्टीकरण का सहारा लेना होगा।

यह बात स्मरण रखना चाहिए कि परस्पर विरोधा और टकराव उद्गार में वही उत्पन्न होता है जहां वार्ताकार में या अज्ञान पाया जाता हो या भूल चूक। पालनकर्ता के पुनीत अस्तित्व में न अज्ञान को राह है न भूल चूक को। अतएव उसके कथन में परस्पर विरोधा या टकराव का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। इसीलिए कुर्आन मजीद ने अपने ईश्वरीय वाक्य होने का प्रमाण ही यह बात ठहरायी है कि 23 वर्षों की अवधि में शनैः शनैः अवतरित होने वाले ग्रन्थ की कोई दूसरी आयत से कोई बात दूसरी बात से नहीं टकराती। ईश्वरीय वचन है कि अगर कुर्आन खुदा के सिवा किसी और का वाक् होता तो लोगों को इसमें पग–पग पर विभिन्नता दृष्टिगोचर होती। ईश्वरीय वाक् के वाक्यों का परस्पर टकराव सम्भावना सीमा से परे है परन्तु हुआ यह कि–

स्वत्न स्वपन फ़लों के बाहुल्य के और भी विश्वर गया।

"यह अस्त–व्यस्त मस्तिष्क वालों की अस्त व्यस्त धारणा थी जिसने स्वंय कुर्आन के अर्थ और उद्देश्यों को तितर बितर और अस्त व्यस्त कर दिया।

dqj[illegible] dhvk;rksaesa ijLij fojks/kdkfo'ys"k.k%

किसी भी वाक्य में टकराव और परस्पर विरोध दो प्रकार का होता है। एक यह कि एक बात दूसरी बात का पूर्णतया स्पष्ट और प्रत्यक्ष रूप से खण्डन कर रही हो जैसे "ज़ैद कल दिन 12 बजे बम्बई में था।" और "ज़ैद कल 12 बजे बम्बई में नहीं था।" अथवा जैसे "ज़ैद 1 मई सन् 86 को जीवित था।" एंव "जैद 1 मई सन् 86 को जीवित नहीं था।" इस प्रकार के वाक्यों में एक वाक्य दूसरे वाक्य को प्रत्यक्ष और स्पष्ट रूप से नकार रहा है। यह सर्वथा खुला हुआ परस्पर विरोध और टकराव है। परस्पर विरोध की दूसरी श्रेणी वह है जहां एक वाक्य दूसरे वाक्य की तो काट करता है, एक वाक्य दूसरे वाक्य का परस्पर विरोधी तो होता है! मगर यह टकराव और विरोध स्पष्ट और प्रत्यक्ष नहीं होता अपितु एक बात का अनिवार्य निष्कर्ष दूसरे वाक्य को नकारता है। जैसे "मैं कल 12 बजे कलकत्ते में था और कल 12 बजे बम्बई में था। अमुक व्यक्ति 1 मई, 86 को जीवित नहीं था।" और अमुक व्यक्ति 1 मई 86 को खाना खा रहा था। 12 बजे कलकत्ते में होने का अनिवार्य फल यह है कि मैं उस समय बम्बई में नहीं था। खाना खाने का अनिवार्य फल यह है वह व्यक्ति उस समय जीवित था। ऐसे परस्पर विरोधी वाक्यों में प्रत्येक दशा में यह समाई होती है कि अनिवार्य फल यदि वास्तव में अनिवार्य फल होता है तो परस्पर विरोध सिद्ध रहता है। परन्तु यदि अनिवार्य फल ठीक नहीं होता तो परस्पर विरोध समाप्त हो जाता है।

दोनों प्रकार की कुर्आन मजीद की आयतों में जिनको ऊपर प्रस्तुत किया गया है पहले प्रकार का परस्पर विरोध नहीं पाया अपितु उनमें केवल दूसरे प्रकार का परस्पर विरोध पाया जाता है। इन आयतों में से कोई आयत किसी दूसरी आयत का ने प्रत्यक्ष खण्डन करती है न नकार रही है। अपितु एक आयत का अनिवार्यफल दूसरे को नकार रहा है। यह कहीं नहीं है कि एक आयत कहे कि प्रत्येक बात अल्लाह के हाथ में है, और दूसरी आयत कहे कि प्रत्येक बात अल्लाह के हाथ में नहीं है। एक आयत कहे जिसे चाहे अल्लाह सम्मान दे और जिसे चाहे अपमानित करे और दूसरी आयत कहे जिसे अल्लाह अपमानित नहीं कर सकता है। एक कहे कि मनुष्य विवश है। और दूसरी कहे कि विवश नहीं है। या यह कि एक आयत कहे कि प्रत्येक वस्तु ईश्वरीय ज्ञान में नहीं है अथवा यह कहे कि जो होता है हरि इच्छा से होता है और दूसरी आयत कहे कि प्रत्येक वस्तु हरि इच्छा से नहीं होती है।

इस प्रकार का प्रत्यक्ष परस्पर विरोध और टकराव इन आयतों में कदापि नहीं है, अपितु इन आयतों को देखकर मुसलमानों में "जब्र व इख़्तियार" का विवाद मात्र इसलिए चल निकला कि प्रत्येक कार्य के हरि इच्छा के अनुरूप होने की अनिवार्यता ही यह समझी गयी कि इन्सान विवश हो और किसी बात के ईश्वरीय ज्ञान में होने का प्रमाण ही यह माना गया कि मनुष्य चाहे या न चाहे वह बात होकर रहेगी। अन्यथा उमर ख़य्याम के कथनानुसार ईश्वरीय ज्ञान, बन जाएगा।

दूसरी ओर मनुष्यों के अपने आचरण, कार्यों और चिन्तनों में स्वतन्त्र होने का अनिवार्य फल ही यह समझा गया कि न पहले से किसी नियति का अस्तित्व था न पहले से कोई बात निश्चित थी। अपितु मनुष्य स्वंय अपना भाग्यविधाता है। इसी आधार पर दोनों धड़ों के कुर्आन के भाष्यकारों को कुर्आन की कुछ आयतें कुछ दूसरी आयतों के विरूद्ध दिखायी दीं और यह दोनों धड़े अपने अपने मत के अनुमोदन में इन आयतों का स्पष्टीकरण करने लगे जो उनके मत के

विरूद्ध जाती थी। भाष्य की किताबें इस प्रकार के स्पष्टीकरणों से पटी पड़ी हैं।

अब अगर हम यह मान के चलें कि कोई ऐसी स्थिति बन जाएगी कि अल्लाह के परिशुद्ध ज्ञान (Abrolute knowledge) और परिशुद्ध इच्छा (Abrolute will) और निर्णय और नियतिकरण और मनुष्य की स्वतन्त्रा व स्वाधीनता में पायी जाने वाली नकारात्मकता समाप्त हो जाये तो फिर न इन आयतों में टकराव शेष रहता है। न स्पष्टीकरण की आवश्यकता बचती है।

यथार्थ यह है कि यथार्थ यही है, न कुर्आनी आयतों में कोई परस्पर विरोध था न टकराव, यह भाष्यकारों और टीकाकारों के ज्ञान की कमी थी कि उनको इन आयतों में परस्पर विरोध दिखायी दिया और इन आयतों के परिकल्पित परस्पर विरोध को दूर करने के लिए उन्हें इधर उधर के स्पष्टीकरण का सहारा लेना पड़ा।

हुजूर का शुभ क7थन था कि ''मेरे पंथ का मतभेद वरदान है।'' इस मतभेद से हुजूर (स०) का अभिप्राय शास्त्रीय मतभिन्नता थी जो सदैव वहां पैदा होता है जहां बुद्धि जागरूक हो और जहां व्यक्ति विशेष या किसी समाज के दबाव के बिना केवल स्वतन्त्र और शास्त्रीय अनुसन्धान के आधार पर यथार्थ तक पहुंचने का सद्यत्न किया जाता हो अनुसन्धान स्वाधीन और शास्त्रीय होता है तो दृष्टिकोणों में विभिन्नता पैदा होती है, जब मत भिन्न होता है तो शास्त्रीय वाद–विवाद पैदा होते हैं, शास्त्रीय वाद–विवाद होते हैं तो चिन्तन का अभ्यास होता है, और चिन्तन का अभ्यास होता है तो चेतना में प्रगति होती है, चेतना में प्रगति होती है तो ज्ञान में वृद्धि होती है और ज्ञान में वृद्धि होती है तो समुदाय की मान–मर्यादा में भी वृद्धि होती है। यही मतभेद वह है जिसे हुजूर (स०) ने वरदान बताया है।

मगर यही मतभिन्न उस समय मसीबत बन जाता है जब ढंग अपमान जनक बन जाये, नीयतो पर हमले प्रारम्भ हो जायें, तर्कना के बजाय औछी बातें की जानें लगें, व्यक्तिगत बातों को बीच में लाया जाने लगे, व्यंग्य, कटाक्ष प्रारम्भ होने लगें और वार्ता का ढंग सकारात्मक होने के स्थान पर नकारात्मक हो जाये, अर्थात बल अपने मत की सत्यता सिद्ध करने पर न हो केवल दुसरे के मत को खंडित करने पर पूरी शक्ति लगा दी जाये।

दुर्भाग्य की बात यह है कि मुसलमानों में जब भी ऐसा वाद–विवाद चला है अधिकांशतः यही हुआ है कि वरदान वाले मतभेद की बजाए मुसीबत वाला मतभेद सामने आया है जिसका क्रम अर्थ अभी तक चल रहा है।

चुनान्चे क्षेपक स्वरूप सही परन्तु पाठको को ध्यान दिला दिया जाये कि मौलाना मन्जूर नोमानी और मौलाना अबुल हसन अली नदवी सरीखे विद्वानों की ओर से भी शीओं के विश्वासों के विरूद्व जो पुस्तकें जबरदस्त पूंजी से अभी हाल ही में प्रकाशित की गयीं हैं उनमें भी बहस का सारा बल विरोधी मत के खण्डन पर ही दिया गया है। अपने मत और पंथ की सत्यता पर नहीं। इस दशा में धर्म प्रचार कम और दिल दुखाना अधिक होता है, जबकि सकारात्मक तर्कना पद्वति में दिल दुखाने वाले आयाम कम हो जाते हैं परन्तु चूंकि नकारात्मक वार्ता पद्वति सदैव सहज होती है इसलिए सहजता प्रिय लोग इसी ढंग को अपनाया करते हैं।

संक्षेप में यह कि मुसलमानों में ''जब्र व इख़्तियार'' (स्वेच्छाकारिता एंव बाध्यकारिता) का विवाद चला तो यथा प्रथा दिशा नकारात्मक ही रही अर्थात प्रत्येक फ़रीक़ का बल दूसरे पक्ष के पथ को असत्य ही सिद्व करने पर रहा अपने पथ की सिद्वि पर नहीं रहा।

इस बहस को आगे बढ़ाने से पूर्व आवश्यक है कि मुसलमानों के मध्य सइ–ए–इस्लामी विश्वास के प्रसार के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत कर दिया जाये कि मनुष्य अपने आचरण में पूर्णतया विवश है वह जो भी करता है वह ईश्वर का कार्य होता है इस पृष्ठ भूमि से यह बात पूर्णतया उजागर हो जायेगी कि मुसलमानों के बीच यह मान्यता राजनैतिक स्वार्थ के आधार पर फैलायी गयी और सरकारों के दबाव ने मुसलमानों के बीच इस मान्यता को उभारा और फैलाया।

मुझे इस्लाम के प्रारम्भिक काल में तक़्दीर या क़ज़ा व कद्र (भाग्य और नियति) के अर्थ में कहीं भी प्रयोग होते नहीं मिले। तक़्दीर या क़ज़ा व क़द्र की व्याख्या ''जब्र'' (बाध्यकारिता) के रूप में पहली बार बनी उमैया के शासन काल में मिलती है।

स्पष्ट है कि इस अइस्लामी विश्वास को बनी उमैया सम्राज्य का संरक्षण प्राप्त होना चाहिए था क्योंकि इस विश्वास को ग्रहण कर लेने के उपरान्त

मनुष्य को इहलोक में न किसी प्रकार की स्वतन्त्रता प्राप्त है न अधिकार, जो करता है वह खुदा करता है। अन्याय एंव है अत्याचार के विरूद्व छोटे से छोटे प्रतिरोध के लिए द्वार बंद हो जाते हैं। यह विश्वास एक प्रकार से अत्याचारी शासन और उसके कार्यकर्ताओं के अत्याचारों के विरूद्व लोगों को लक़वाग्रस्त बना देने की उत्तम वैक्सीन थी।

एक ओर अत्याचारी सन्तुष्ट हो जाते हैं कि उनका अत्याचार और उत्पीड़न ही हरि–इच्छा है, दूसरी और पूंजीपति प्रसन्न थे कि उनकी धन दौलत हरि–इच्छा का चमत्कार है। यह तो स्वंय विधाता है जो किसी को रात की रोटी तक का मुहताज बना देता है और किसी को धनाढ़यता और सम्पन्नता से निहाल कर देता है। तीसरी ओर अन्याय पीडित, दीन, दुर्बल भी हरि–इच्छा पर सन्तोष किये रहते हैं कि जो हो रहा है वह हरि इच्छा से हो रहा है। अपनी दयनीय दशा पर आपत्ति ईश्वरीय निर्णय एंव हरि–इच्छा के प्रतिरोध के समान होगा।

यह विकृत विश्वास सत्ता के बल पर बड़े जोर शोर से मुसलमानों में फैलाया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि मुसलमानों के बीच यह घातक विचार फैल गया कि अत्याचार के विरूद्व आवाज उठाना और प्रतिरोध करना व्यर्थ भी है और अइस्लामी भी। इसलिए कि जो कुछ हो रहा है वही हरि इच्छा और ईश्वरीय–निर्णय है और अइस्लामी इसलिए कि इस प्रतिरोध का अर्थ ही हरि–इच्छा पर आपत्ति करना। जबकि मुसलमान का कर्तव्य है कि हरि–इच्छा के समक्ष सदैव मानने और स्वीकार करने की स्थिति में रहे।

अहले–बैत के पथ ने इस विकृत और अइस्लामी मान्यता का घोर विरोध किया। न उनके पास सत्ता थी और न खरीदे हुए धर्माचार्य और हदीस शास्त्री, न अपनी बात के फैलाने के साधनों की प्रचुरता। बनी उमैया और बनी अब्बास के शासकों ने उनके साथ वही बर्ताव किया जो इससे पहले पैग़म्बरों के साथ उनके युग के ज़ालिम और अत्याचारी बादशाह करते रहे थे। मगर यह उनकी सत्यता का प्रभाव था और ज्ञान एंव तर्कना का बल था कि इस युग में भी इस विश्वास के विरूद्व आवाजें उठती रहीं। बनी उमैया के पास ज्ञान न था कि मिंबर (मंच) को इस काम में लाते ले देकर एक तलवार ही थी चुनांचे हर मर्तबा इसी का उपयोग किया गया।

चुनांचे पहले मअ्बद–ए–जुहनी ने इस विकृत विश्वास के विरूद्व प्रतिरोध किया तो उसको प्रसिद्व उमवी अत्याचारी प्रशासक हुज्जाज ने क़त्ल कर दिया। फिर शाम में ग़ैलान दमिश्की ने इसके विरूद्व जबान खोली तो हिशाम बिन अब्दुल मलिक के हुक्म से उसे मौत की नींद सुला दिया गया।

अहले–ए–बैत (अ०) ने इस विकृत विश्वास के विरूद्व इस सुदृढ़ता से मोर्चा लिया कि यद्यपि उनको गूमनामी के कोने में रखा गया लेकिन उनकी मान्यता घरों और बाजारों तक पहुंच ही गयी और जनसाधरण की जबान पर यह चढ़ गया कि ''जब्र और तश्बीह'' उमैय्या वालों का विश्वास है और ''अदल और तौहीद'' अली वालों का विश्वास है।

बहरहाल इस चुनौती के होते हुए भी शासन की ओर से ''जब्र'' के विश्वास का ज़ोर शोर से प्रचार प्रसार होता रहा और यह मत ''सरकारी मत'' ठहरा दिया गया खुली हुई बात है जो मत और विश्वास राजदरबार का होता है वही जनसामान्य में फैलाता है। सत्ता के गुणों ने भी इससे खूब–खूब लाभ उठाए। बनी उमैय्या के अत्याचारों की कठोरता के विरूद्व अगर संयोगवश कभी कोई आवाज़ उठी भी तो सत्ता के दलालों ने उसे यह कहकर चुप कर दिया कि जो हो रहा है हरि इच्छा से हो रहा है और यही विधिा का विधान है। उस जमाने का ''कलिमा'' (मंत्र) यह वाक्य बन गया था कि ''हम भाग्य पर ईमान ला चुके चाहे वह भला हो चाहे बुरा।''

उमैय्या वंश के शासन का युग समाप्त हुआ और बनी अब्बास का काल प्रारम्भ हुआ तो अब्बासी बादशाहों ने अपने राजनैतिक लाभ को दृष्टिगत रखते हुये जहां उमैय्या वालों के सभी निशान चिन्ह मिटा दिये वहां जब्र सम्बन्धी विश्वास का भी प्रतिरोध किया। मगर ईश्वरीय न्याय और मानव स्वतन्त्रता का विश्वास अत्याचारियों को रास न आ सकता था। इसलिए मामून और मोअतसिम यद्यपि अपने युग में इख्तियार के पक्षधर दिखते हैं। मगर मुतवक्किल अब्बासी का युग आते ही जहां सारी अश्अरी मान्यताओं को सत्ता की सरपरस्ती मिली वहीं जब्र के विश्वास को भी सत्ता का समर्थन प्राप्त हो गया।



मुख्य समाचार

bl zkbZyh iqfyl us efLtn nsv D+kl s 6 uekth fgjkl r eas fy,

इस्राईली पुलिस ने जुमे के दिन नमाज़े जुमा की अदाएगी के बाद मस्जिदे अक़्सा से निकलते हुए छः नमाज़ियों को हिरासत में लेने के बाद अज्ञात स्थान पर ले गये हैं। गवाहों के अनुसार नमाज़े जुमा के बाद सैकड़ों फ़िलिस्तीनियों ने उर्दन से मस्जिदे अक़्सा की सरपरस्ती वापिस लेने की इस्राईली मांग के विरूद्ध धरना प्रदर्शन किया। प्रदर्शनकारी आगे बढ़ते हुए केन्द्रीय दरवाज़े के निकट जा पहुंचे जहां क़ाबिज़ पुलिस ने उन पर लाठी चार्ज की। फ़िलिस्तीनियों ने भी सहयूनी पुलिस पर पत्थर बरसाए।

इस मध्य सहयूनी पुलिस ने छः फ़िलिस्तीनियों को क़ैद करने के बाद नामालूम स्थान पर ले गये। सूत्रों के अनुसार नमाज़े जुमा के बाद नौयुवा नगरवासियों की बड़ी संख्या मुंह पर रूमाल लपेटे इस्राईली पुलिस की ओर लपक पड़ी और क़ाबिज़ पुलिस अहलकारों पर पत्थर बरसाये।

; gwnh vkckndkjksa dk fdCyk&,&vOoy ij /kkok

मस्जिदे अक़्सा पर यहूदी आबादकारों के आक्रमण और क़िब्ला–ए–अव्वल की बेहुरमती का मकरूह जुर्म बदस्तूर जारी है। ख़बरों के अनुसार कम से कम 60 यहूदी आबादकारों, सहयूनी पुरूष, स्त्री फौजियों और यहूदी रबीयों ने केन्द्रीय दरवाज़े से क़िब्ल–ए–अव्वल में घुसकर उसकी बेहुरमती की। अक़्सा फ़ाउण्डेशन व ट्रस्ट की ओर से जारी एक बयान में बताया गया है कि पुलिस और सेक्योरिटी संस्थानों ने उग्रवादियों को फूल प्रूफ सोक्योरिटी मुहय्या कर रखी थी। उन्होंने कहा कि यहूदी आबादकारों के कई समूह मस्जिदे अक़्सा में घुसे।

अलस्सबाह मुसलमानों और फ़िलिस्तीनियों से दुश्मनी में प्रसिद्ध यहूदी रबी ''यहूद अगलीक'' के साथ कम से कम 35 यहूदी ने मस्जिदे अक़्सा पर आक्रमण किया। ये लोग कई घण्टों तक मस्जिद के अन्दर घूमते रहे। अभी ये मस्जिदे अक़्सा के अन्दर ही थे कि सहयूनी फ़ौज में नए भर्ती होने वाले सहयूनी विद्यार्थी केन्द्रीय दरवाज़े से क़िब्ल–ए–अव्वल में आ गये। उस समय उन्हें मस्जिदे अक़्सा के स्थान मज़मूम हैकल सुलैमानी की तामीर के हवाले से ब्रिफ़िंग दी गयी। इस दौरान इस्राईली पुलिस के अनुसार मस्जिदे अक़्सा की हिफ़ाज़त पर तैनात फ़िलिस्तीनी मोहकमा औक़ाफ़े इस्लामी के तीन अहलकारों को क़ैद करने वाले अहलकार जसाम बद्र और राएदुज़्ज़ग़ीर ग़ैर मस्जिदे अक़्सा के बाबुर्रहमा के निकट खड़े थे जहां क़ाबिज़ पुलिस अहलकारों ने उन्हों क़ैद कर लिया। गवाहों के अनुसार क़ैद किये जाने वाले अहलकारों की आखों पर पट्टियां बांधकर उन्हें हथकड़ियां लगाई गयीं और पांव में भारी ज़न्जीरें डाल कर नामालूम स्थान पर ले जाया गया।

fQfyLrhuh uxj lyfQ+r ds 70% Hkkx ij bl zkbZy dk dCtk eqlhcrksa dk f'kdkj

फ़िलिस्तीन के मक़बूज़ा पश्चिमी किनारे के शिमाली नगर सलफ़ियत में यहूदी तौसीअ़ पसन्दी दूसरे नगरों से ज़्यादा देखने में आई है। माहेरीन का कहना है कि सहयूनी सरकार सलफ़ियत नगर के 70% रक़्बा पर क़ब्ज़े की घिनाउनी कोशिश कर रही है। फ़िलिस्तीन की केन्द्रीय ख़बरों के अनुसार फ़िलिस्तीन में यहूदी बस्तियों के कामों के माहिर ख़ालिद मुआली का कहना है कि इस्राईल मक़बूज़ा सलफ़ियत की आराज़ी का 70% हथियाने की साज़िश कर रहा है। उन्होंने बताया कि सहयूनी सरकार ने सलफ़ियत में यहूदी कालूनियों की संख्या 18 से बढ़ाकर 23 करने का फ़ैसला किया है जिसमें मज़ीद हज़ारों की संख्या में यहूदियों को आबाद करने की योजना तैयार की गयी है। ख़ालिदुल मुआली का कहना था कि सहयूनी फ़ौज ने अमलन सलफ़ियत की 70% आराज़ी को अपने क़ब्ज़े में ले लिया है। क्योंकि कई मुख्य स्थानों पर सहयूनी फ़ौज ने अपने कैम्प और चेक पोस्टें बना रखी हैं। सैकड़ों एकड़ आराज़ी को फ़ौजी इलाक़ा क़रार देकर फ़िलिस्तीनियों के अन्दर आने पर रोक लगा दी है। उन्होंने बताया कि सलफ़ियत के एक क़स्बे के 70% भाग पर इस्राईली सेना का कब्ज़ा है, जहां यहूदियों के लिए भवन निर्माण किये जा रहे हैं। सहयूनी सरकार ने उस इलाक़े को 1994 ई0 में तै पाये उसलो समझौते की दृष्टि से ''सेक्टर''G में भाग ले रखा है और इस्राईल ने दावा किया है कि ये मुआहेदे से हठ कर भी सहयूनी रियासत का हिस्सा है।

इसलिए यहां फ़िलिस्तीन नगरवासी किसी भी तरह का निर्माण नहीं कर सकते और न ही उन्हें यहा पर खेती बाड़ी की आज्ञा है। ख़ालिद मुआली ने बताया कि सलफ़ियत में मीठे पानी का पश्चिमी किनारे का सबसे बड़ा कुआं है। लेकिन बदक़िस्मती से उसके पानी का सिर्फ़ 5% भाग फ़िलिस्तीनियों को मिल रहा है शेष 95% पानी यहूदी ले जाते हैं।

इस्राईली सेना की फ़ाएरिंग से 30 फ़िलिस्तीनी प्रदर्शनकारी ज़ख़्मी

फ़िलिस्तीन के अधिकृत पश्चिमी किनारे के शहर जुनैन में इस्राईली सेना ने फ़िलिस्तीनी प्रदर्शनकारियों पर हमला किया जिसके नतीजे में कम से कम 30 व्यक्तियों को चोट आई है स्थानीय लोगों का कहना है कि फ़िलिस्तीनी नगरवासियों ने इस्राईल द्वारा निर्माणित फ़ासिल दीवार के विरूद्ध प्रदर्शन किया था और प्रदर्शनकारी रैली के रूप में इस्राईली अपने खेतों की ओर बढ़ रहे थे कि सहयूनी पुलिस और फ़ौज ने उन पर हमला कर दिया। स्थानीय लोगों ने मरकज़े इत्तेलाआते फ़िलिस्तीन को बताया कि हफ़्ते के दिन दक्षिणी जुनैन के यअबद और ''अलतरम'' क़स्बे के शहरियों की बड़ी तादाद ने इस्राईल की निर्माण की हुई दीवार के विरूद्ध प्रदर्शन किया। सहयूनी फ़ौजियों ने प्रदर्शनकारियों को रास्ते ही में रोकने की कोशिश की और उनपर लाठीचार्ज की और उनपर गोलियां चलाईं जिनमें कम से कम 30 फ़िलिस्तीनी ज़ख़्मी हुए हैं। इस समय फ़िलिस्तीनी प्रदर्शनकारी ने दुश्मन की फ़ौज पर पत्थर बरसाये। लोगों के अनुसार सहयूनी फ़ौजियों की ओर से फ़ेंका गया आंसू गैस का एक शेल 25 वर्षीय अहमद हरजुल्लाह की दाईं टांग पर लगा है जिसके नतीजे में उनकी टांग बेकार हो गयी। उसके अलावा दूसरे 29 व्यक्ति ज़ख़्मी भी हुए हैं। ज़ख़्मियों में कई विदेशी भी हैं।

इराक़ी जेलों में स्त्रियों के साथ शोषण

हयूमन राइट्स वाच ने कहा है कि इराक़ में हज़ारों स्त्रियां ग़ैर क़ानूनी तौर पर जेलों में क़ैद हैं, जहां उन्हें शारीरिक शोषण के अलावा तशद्दुद और दूसरे प्रकार के अत्याचारों का सामना रहता है। आलमी न्यूज़ एजेन्सी संस्था ने बताया है कि हयूमन राइट्स वाच की ओर से जारी की गयी एक ताज़ा रिपोर्ट के अनुसार इराक़ी जेलों में क़ैद ज़्यादा स्त्रियां सुन्नी समुदाय से हैं। इस रिपोर्ट में लगाये गये इल्ज़ामात की बुनियाद बंधक स्त्रियों की गवाहियां, उनके घर वाले और वकीलों के बयानात और मेडिकल रिपोर्टें हैं। इस रिपोर्ट को तैयार करते हुए अदालती दस्तावेज़ और हुक्काम से मुलाक़ातों की तफ़सीलात को भी गवाह के तौर पर इस्तेमाल किया गया है। बताया गया है कि जेलों में स्त्रियों के साथ बलात्कार किया जाता है, उन्हें मारा पीटा जाता है और बिजली के झटके भी दिये जाते हैं। रिपोर्ट में ये भी कहा गया है कि कई बार घर वालों के सामने क़ैद स्त्रियों को उनके घर वालों के सामने उनका शारीरिक शोषण करने की धमकी दी जाती है।

फ़िलिस्तीन के हज़ारों नगरिक बुनियादी अधिकार से वंचित

उत्तरी फ़िलिस्तीन का प्राचीन साहिली नगर सहयूनी हुकूमत की नस्ल परस्ताना योजना के नतीजे में तबाही से दो चार है। हाल ही में 1947 ई0 के मक़बूज़ा इलाक़े अका मे एक ख़राब इमारत गिरने से कम से कम पांच फ़िलिस्तीनी मर गये और कई ज़ख़्मी हो गये। मरकज़े इत्तेलाआते फ़िलिस्तीन के अनुसार सहयूनी हुकूमत की ओर से अरब बहुसंख्यक इलाक़े की केवल इस कारण से बराबर अनदेखी की जा रही है। कि वहां यहूदियों के बजाए मुसलमानों और अरबों की संख्या अधिक है। स्थानीय फ़िलिस्तीनी नगरवासियों और नुमाइन्दा शख़्सियात ने सहयूनी हुकूमत की नस्ल परस्ताना पालिसी को कड़ी तन्क़ीद का निशाना बनाया है। स्थानीय आबादी ने दुनियावी संस्थानों से इन्सानी अधिकार को मांगा है कि वह सहयूनी सरकार की ज़ालेमाना पालिसी और यहूदियों की नस्ल परस्ती का नोटिस लेते हुए अका शहर के फ़िलिस्तीनी नागरिकों को उनके अधिकार देने में मदद करें। इस्राईली कनेस्ट के पूर्व सदस्य अब्बास ज़कूर ने ''कुद्स प्रेस'' से बात करते हुए कहा कि अका में जर्जर भवन गिरने से पांच फ़िलिस्तीनियों की मौत का ज़िम्मेदार इस्राईल है। इस्राईली सरकार की ओर से फ़िलिस्तीनी नगरवासियों को बुनियादी सहूलियात से वंचित रखा जा रहा है जिसके नतीजे में स्थानीय अरब आबादी पुराने और जर्जर भवनों में रहने पर मजबूर हैं। उन्होंने पिछले सप्ताह भवन के नीचे दबकर पांच व्यक्ति के मरने और 13 के ज़ख़्मी होने की दुखित घटना की जांच की मांग किया। अब्बास ज़कूर का कहना था कि अका के ग़रीब जनता की समस्याओं को बयान करना भी निहायत तकलीफ़देह है। लोग बुनियादी सहूलियात से महरूम हैं और इस्राईल के तमाम रियासती इदारे अका की आबादी को बुनियादी ज़रूरतों दिये जाने को लेकर लापरवाही कर रहे हैं।